ISSN : 2320-0391

साहित्य और संस्कृति

सृजन

ಸೃಜನ

हिंदी-कन्नड त्रैमासिक पत्रिका

ಹಿಂದಿ-ಕನ್ನಡ ತ್ರೈಮಾಸಿಕ ಪತ್ರಿಕೆ

जुलाई - सितंबर २०१८

ISSN : 2320-0391

साहित्य और संस्कृति

सृजन

ಸೃಜನ

हिंदी-कन्नड त्रैमासिक पत्रिका

ಹಿಂದಿ-ಕನ್ನಡ ತ್ರೈಮಾಸಿಕ ಪತ್ರಿಕೆ

जुलाई - सितंबर २०१८

RNI Regd. No. KARBIL/2014/54464 Postal Regd. No/ PMG/KA/NK/BJP/60/2017-19

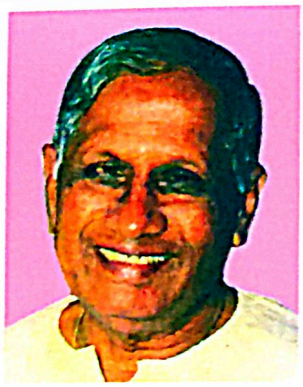

नोटों की कीमत घट रही है
सबकुछ महँगा हो रहा है
मात्र मनुष्य सस्ता हो रहा है।
भूमि-आकाश के बीच का अंतर
कम हो रहा है,
मनुष्य-मनुष्य के बीच का अंतर
बढ रहा है।
ज्ञान-विज्ञान में वृध्दि हो रही है
प्रेम-विश्वास कम हो रहा है
कला-साहित्य की परिधि बढ रही है
उनका स्तर गिर रहा हैं
खाने के मुँह बढ रहे हैं
कमाने के हाथ, घट रहे हैं
नगर के विस्तार हो रहे हैं
गुणवत्ता कम हो रही है
गाँव-गाँव में योजनाएँ बढ रही हैं
मन-मन का मिलाप
कम हो रहा है
स्वतंत्रधीर सिध्देश्वर
बाहरी अमीरी बढने के साथ-साथ
आंतरिक गरीबी में वृध्दि हो रही है।

- सिध्दय्या पुराणिकर 'काव्यानंद'

ಓಟುಗಳ ಬೆಲೆ ಬೆಳೆಯುತ್ತಿದೆ,
ನೋಟುಗಳ ಬೆಲೆ ಇಳಿಯುತ್ತಿದೆಯಯ್ಯಾ
ಎಲ್ಲವೂ ತುಟ್ಟಿಯಾಗುತ್ತಿದೆ,
ಮನುಜ ಮಾತ್ರ ಅಗ್ಗವಾಗುತ್ತಲಿಹನಯ್ಯಾ;
ಭೂಮ್ಯಾಕಾಶಗಳ ನಡುವಣ ಅಂತರ
ಕಡಿಮೆಯಾಗುತ್ತಿವೆ.
ಮನುಜ ಮನುಜರ ನಡುವಣ ಅಂತರ
ಹೆಚ್ಚುತ್ತಿದೆಯಯ್ಯಾ;
ಜ್ಞಾನ-ವಿಜ್ಞಾನಗಳು ಹೆಚ್ಚುತ್ತಿವೆ,
ಪ್ರೀತಿ ವಿಶ್ವಾಸಗಳು ಕಡಿಮೆಯಾಗುತ್ತಿವೆಯಯ್ಯಾ;
ಕಲೆ ಸಾಹಿತ್ಯಗಳ ವ್ಯಾಪ್ತಿ ಹೆಚ್ಚುತ್ತಿದೆ,
ಅವುಗಳ ಗುಣ ಘನತೆ
ಕಡಿಮೆಯಾಗುತ್ತಿವೆಯಯ್ಯಾ;
ಉಣ್ಣುವ ಬಾಯಿಗಳು ಹೆಚ್ಚುತ್ತಿವೆ,
ದುಡಿಯುವ ಕೈಗಳು
ಕಡಿಮೆಯಾಗುತ್ತಿವೆಯಯ್ಯಾ;
ನಗರ ವಿಸ್ತರಣೆಗಳು
ಕಡಿಮೆಯಾಗುತ್ತಿವೆಯಯ್ಯಾ;
ಊರೂರಿಗೆ ಯೋಜನೆಗಳು ಹೆಚ್ಚುತ್ತಿವೆ,
ಮನಮನಗಳ ಸಂಯೋಜನೆಗಳು
ಕಡಿಮೆಯಾಗುತ್ತಿವೆಯಯ್ಯಾ;
ಸ್ವತಂತ್ರಧೀರ ಸಿದ್ಧೇಶ್ವರಾ,
ಹೊರಗೆ ಸಿರಿ ಹೆಚ್ಚಿದಷ್ಟೂ
ಒಳಗೆ ಬಡತನ ಬೆಳೆಯುತ್ತಿವೆಯಯ್ಯಾ !

– ಡಾ. ಸಿದ್ಧಯ್ಯ ಪುರಾಣಿಕರ 'ಕಾವ್ಯಾನಂದ'

ISSN 2320-0391

सौम्य प्रकाशन
'कबीर कुंज' महाबलेश्वर कॉलनी,
दर्गा जेल के सामने,
विजयपुर - ५८६१०३ (कर्नाटक)

सौ

ಸೌಮ್ಯ ಪ್ರಕಾಶನ
'ಕಬೀರ ಕುಂಜ' ಮಹಾಬಳೇಶ್ವರ ಕಾಲೋನಿ,
ದರ್ಗಾ ಜೇಲ ಮುಂದೆ,
ವಿಜಯಪುರ - ೫೮೬೧೦೩ (ಕರ್ನಾಟಕ)

अनुक्रम

लेख

1.	हिन्दी सेवी डॉ. इसपाक अली	• डॉ. जुबेदा एच. मुल्ला	1
2.	महानगरीय विसंगतियों का पर्दाफाश करता उपन्यास : वोरीवली से वोरीबंदर तक	• डॉ. एस. टी. मेरवाडे	3
3.	मध्यवर्गीय परिवार के संघर्ष की कथा 'भ्रमभंग'	• डॉ. शंकर तेरादाल	7
4.	हिंदी का सफर विश्वभाषा की ओर	• प्रो. एम. ए. पीराँ	10
5.	साम्प्रदायिकता की त्रासदी को व्यक्त करता उपन्यास 'मैं वोरिशाइल्ला'	• डॉ. साहेबहुसैन जे. जहागीरदार	12
6.	मानसिक तनावों के संघर्ष में प्रमिला	• डॉ. बसवराज के. बारकेर	19
7.	संत कबीर: क्रांतिकारी विचारधारा के प्रवर्तक	• सुमी चोपडे	22
8.	अमरकांत की कहानियों में यथार्थबोध	• लोकेश	25

■■

महानगरीय विसंगतियों का पर्दाफाश करता उपन्यास :बोरीवली से बोरीबंदर तक

• डॉ. एस. टी. मेरवाडे

कथा शिल्पी शैलेश मटियानी का प्रमुख उपन्यास 'बोरीवली से बोरीबंदर तक' सन 1956 में श्री कृष्ण पुरी हाउस में लिखा गया तथा सन 1959 में आत्माराम एंड संस द्वारा प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत कृति में रचनाकार ने 'बोरीवली और बोरीबंदर' के बीच रहने वाले लोगों का सूक्ष्म एवं जीवंत चित्रण किया है जो एक ओर अपने दोजख को भरने के लिए घृणित -से-घृणित कार्य करने के लिए अभिशप्त हैं और दूसरी ओर आभिजात्य वर्ग की विलासिता, व्यवस्था में मौजूद वे कर्मचारीगण जो अपनी अमानवीयता के बल पर फुटपाथों, रेलवे प्लेटफार्मों पर जीवन घसीटने लोगों के प्रति क्रूरता व्यवहार करने में नहीं चूकते।

विवेच्य कृति में प्रमुख पात्र वीरेंद्र उपन्यासकार के स्वयं के व्यक्तित्व की प्रतीति होती है जो नौकरी की तलाश में अपने मित्र पंडित के साथ मुंबई की यात्रा प्रारंभ करता है। दोनों के पास टिकट नहीं है, सवाई माधोपुर से वीरेन्द्र के मासूम चेहरे ओर गरीबी से बेहाल स्थिति को देखकर स्टेशन मास्टर उसे छोड़ देता है। दादर स्टेशन से बाहर निकलकर वीरेंद्र अपने अनिश्चित भविष्य के बारे में सोचता हुआ 'शिवाजी हिन्दू विश्रांति गृह' में चला जाता है। आर्डरवाला रामस्वामी उससे मराठी में बातें करने लगता है जो कि उसकी समझ में नहीं आती। चाय पीने के बाद वीरेन्द्र न. ची. केलकर मार्ग और दूसरी सडकों पर घूमते-फिरते शिवाजी पार्क की दीवार पर आकर बैठ गया। उसके सामने कोई रास्ता नहीं हैं, लक्ष्य-अलक्ष्य है, कोई ठिकाना नहीं है। वह इन्हीं विचारों के उधेड़बुन में खो जाता है। उसकी आँख झपक गई, जब नींद खुली तो रात के आठ बज रहे थे। महालक्ष्मी रेस्टोरेंट में एक कप चाय पीने के बाद वह शीतला देवी टेम्पल रोड की लंबाई नापता चल दिया। पैराडाइज सिनेमा थियेटर के रास्ते वह माहीम स्टेशन की ओर बढ़ गया। वह माहीम स्टेशन पर ही रात बिताने का निश्चय करता है। उसकी आँख अभी लगी ही थी कि पुलिसवालों ने उठा दिया। वीरेन्द्र मुंबई में नया होने के कारण, कोई-जान-पहचान न होने की बात बता दिया।

वीरेन्द्र को मुंबई सेंट्रल या बोरीबंदर जाने के लिए पुलिसवाले कहते हैं क्योंकि सबर्बन में पोलिस जास्ती पकड़ता है। माहीम से टिकट लेकर वीरेंद्र गाडी में चढ़ जाता है, लेकिन उसे जाना था बोरीबंदर और गाडी पकड़ लिया बोरीवली की। इस प्रकार वह बोरीवली पहुँच गया और वह गाडी में ही पड़ा रहा। जब दुबारा उसकी नींद खुली तो देखा, कई भैया लोग दूध के हंडे सिर पर लिए डिब्बे में आ रहे हैं। वीरेंद्र ने देखा एक भैयाजी ने दो-तीन नोट कमर से निकलकर एक चिकने-चमकीले कागज पर मोमबत्ती के आकार में लपेटकर मुंह में रख लिये। पाकिटमारों से बचने के लिए यही उसके पास नायाब तरीका था। वीरेंद्र को उनकी इस बुद्धिमता की दाद देनी पड़ी। तभी ऊपर से एक छाया

सरकती-सी लगी। एक व्यक्ति भैयाजी की बगल में बैठ गया था। उस व्यक्ति ने दूध के हंडे में से एक घास का तिनका निकाला और भैयाजी की नाक की ओर बढ़ाया और भैयाजी 'आकुछी-आकुछी' करके खर्राटे भरने लगे। भैयाजी का रुपया नीचे गिर गया जिसे उस व्यक्ति ने उठाकर अपनी जेब के हवाले कर लिया। वीरेन्द्र के मुख से हलकी चीख निकलते-निकलते रह गई । तभी वह व्यक्ति वीरेन्द्र की पसली के पास चाकू का नोंक टिकाए कह रहा था... सी सी चोप। साला मुखबिरी करेगा? चीर डालूँगा फाड़ डालूँगा। गुपचुप चल मेरे साथ। खुदा कसम जरा भी पसरेगा तो ईद का बकरा बना डालूँगा। मजबूर होकर उस खूंख्वार व्यक्ति के साथ वीरेंद्र चल दिया। वह व्यक्ति उसे मूंगरापाडा अपने घर ले जाता है।

दादा का पूरा नाम यूसुफ दादा था जो जरायम पेशे का था। कत्ल करना, जुआं का अड्डा चलाना, दारू की भट्ठी चलाना, दारू सप्लाई करना, चोरी करना, इत्यादि काम वह बड़े धडल्ले से करता था। वीरेंद्र की मासूम और भोली सूरत में ही दादा समझ गया था कि वह एक सीधा-सादा इंसान है। दादा वीरेंद्र को अपनी बीवी नूर के हाथों चाय पिलवाने लाया था लेकिन वीरेंद्र की आपबीती सुनकर दादा उसे अपने यहाँ रहने का आग्रह करने लगता है। वास्तव में नूर का असली नाम रेवा था। वह एक ब्राह्मण दुहिता थी जो विवाह के कुछ समय बाद ही विधवा हो गई थी। उसकी माँ तो बचपन में ही मर गई थी। पिता यजमानी करता था। एक दिन वह भी रेवा को इस दुनिया में बिलखता छोडकर चला गया। लछमा चाची रेवा को प्राय: कोसती रहती थी। किस्मत की मारी रेवा भरी जवानी में अपने वैधव्य जीवन के भार को ढोने के लिए मजबूर थी। अंत मने एक दिन करमसिंह की मोहिनी जाल में रेवा फँस ही जाती है और उसके साथ हलद्वानी आ जाती है। कर्मसिंह दो महीने तक हलद्वानी में रेवा के साथ रहा और बाद में अपनी क्रूरता और अविश्वास का ऐसा परिचय दिया कि रेवा को लेकर गायब हो गया। नियति का कुचक्र कुछ ऐसा चला कि रेवा मशीदा, जुम्मन औरशमशुल्ला की बाहों के सहारे एक दिन पिल हॉउस ने पहुंचने के बाद रेवा ने अपना नाम बदलकर 'नूर' रख लिया था। 'नूर' के आवरण में 'रेवा' अपने आप को पूरी तरह ढंक ली थी। उसी पिल हाउस के तीसरी मंजिल पर कभी-कभी युसुफ दादा अपने मन बदलाव के लिए जाया करता था। 'नूर' को देखकर वह लट्टू हो गया। भागूबाई को तीन सौ रुपए देकर दादा 'नूर' को अपनी झोपडी में ले आया इज्जत की दो रोटी देने के लिए। तभी से रेवा 'नूर' बनकर दादा के उजड़े हुए चमन को आबाद करती रही। वीरेन्द्र जब नूर उर्फ रेवा की व्यथा भरी कथा सुनता है तब उसे बड़ा क्लेश होता है ।

जिस दिन वीरेन्द्र दादा के साथ उसके घर गया था, उसी दिन दादा दोपहर पुलिस द्वारा पकड़ लिया गया। दादा को जल्दी जमानत मिलने की उम्मीद न थी। 'नूर' को विट्ठल के माध्यम से जब यह सूचना मिली तो वह सोच में पड गई।

'नूर' के हाव-भाव और बोल-चाल से ही वीरेन समझ गया था कि यह हिन्दू कन्या हो सकती है। बातचीत में भी वह जब नैनीताल के बारे में तथा अपने पिता के बारे में तथा अपने पिता के बारे मने बताते समय 'यजमान' शब्द का प्रयोग की तो वीरेंद्र को भाँपते देर नहीं लगी। बातों-ही बातों में वीरेन्द्र नूर बनाम रेवा की पूरी हकीकत से वाकिफ हो चूका था । दादा को जेल की सलाखों के पीछे कब तक रहना पड़ेगा, यह अनिश्चित था। स्वामी विट्ठल के साथ मिलकर नूर के सतीत्व पर हमला करना चाह लेकिन जो विट्ठल सारा प्लान बनाया था, उसके अंदर का 'मनुष्य' जाग उठा और वह स्वामी से भिड गया। विट्ठल वीरेन को शराब का थैला हाथों में पकड़ाकर चर्चगेट भेज दिया। वीरेन उसके चकमे में आ गया। इधर वीरेन शराब का थैला लेकर ट्रेन के भाजी-पाले वाले छोटे डिब्बे में चढ़ा, उधर विट्ठल ने पुलिस इंस्पेक्टर दांडेकर को इत्तला कर दिया। उसी डिब्बे में एक सिन्धी परिवार भी था जो अपने साथ बाल्टी-गादली

वगैरह लिए हुएथे। विलेपारले में वे लोग अपना सामान उतारने लगे तो उन्हीं सामानों के साथ शराब का थैला भी उतार ले गए। दादर आकर वीरेन डिब्बा बदल लिया। इंस्पेक्टर को हाथ कुछ भी नहीं लगा। वीरेन सोच रहा था कि यदि विट्टल तो कभी का रफू चक्कर हो गया था और अन्ना स्वामी के साथ रेवा की झोपडी में पहुँच गया था। इधर विरेन मरीन लाइंस पर ही उतर गया उस समय सवा पांच बज रहे थे। गाडी अभी आई नहीं थी। इतने में एक टिकट चेकर आ गया और टिकट मांगने लगा। टिकट चेकर वीरेन को पहचान लेता है और उसे अँधेरी तक छोड़ने का बन्दोबस्त भी करता है। टिकट चेकर गोस्वामी जी ने वीरेन्द्र के साथ जो अपनापा और भाईचारे की भावना दिखलाई, उससे वीरेन विह्वल हो उठा। गोस्वामी जी ने अपना पता लिखकर वीरेन को दिया कि वह कभी आकर मिले। कहीं-न-कहीं नौकरी का जुगाड़ लग जाएगा। वीरेन गुगारापाडा के लिए ट्रेन पकड़ लिया। विट्टल और अन्ना स्वामी नूर के साथ जोर जबर्दस्ती करने लगे। निर्बल, असहाय, नूर चीखने लगी। उस समय विट्टल और अन्ना स्वामी की आँखों में वासना के शोले धधक रहे थे। नूर पंखहीन क्पोतिनी-सी थर-थरा रही थी। नूर दौडकर विट्टल के पाँव पकड़ ली... विट्टल। उस वक्त विट्टल चीख पड़ा...स्वामी! विट्टल के बाएँ हाथ में रामपुरिया छुरा नागिन-सी जीभ लपलपा रहा था.. दाएं हाथ से उसने नूर को एक ओर कर दिया। स्वामी-विट्टल में भिडंत हो गयी। स्वामी ताकतवर था। उसने अपने चाकू का वार विट्टल की बांह पर किया। विट्टल के गिरने पर स्वामी उसकी छाती पर चढ़ बैठा। ऐसी स्थिति में विट्ठल के प्राण बचाने के लिए नूर अपने आपको स्वामी के सामने समर्पण करने की बात कहकर रोने लगी... वेश्या-जीवन में जहाँ सैकड़ों पुरुषों का बोझ सहा... और ... सही... जूतियाँ खाकर, चप्पल से क्या परहेज? नूर की आंसुओं की धारा में मानों स्वामी के वहशीपन को बहा दिया। अन्ना स्वामी तेजी से उठा और अपने झोपड़े में चला गया। उस समय स्वामी की आँखे भी अश्रुजल से पूरित थी।

वीरेंद्र जब झोपड़े पर पहुंचा, तब रेवा विट्टल के हाथ में गिला कपड़ा बांध रही थी। वीरेंद्र के पूछने पर रेवा ने उसे चुप रहने का इशारा किया। खून काफी बह चूका था जिससे विट्टल कमजोर हो गया था। रेवा से जब वीरेंद्र सारा वृत्तांत सुना तब सोचने लगा। वीरेंद्र रेवा को अधिक चाहने लगा था। वह रेवा के साथ एक व्यवस्थित जिन्दगी जीना चाहता था। स्टेशन मास्टर पी.सी. गोस्वामी ने अपने घर का पता लिखकर दे दिया था कि वह किसी दिन घर आए। विट्टल रात को ही चला गया था। विरेन प्रात: काल जल्दी ही उठकर गोस्वामी जी के यहाँ चला गया। गोस्वामी जी के माध्यम से विरेन को डाहिया भाई पाटिल के प्रेस में एक सौ दस रूपये महीने की नौकरी मिल गई साथ-ही-साथ 'कोठारी मेंशन' बोरी बंदर में रहने की जगह भी। विरेन रेवा को अपने साथ चलने के लिए कह रहा था। विरेन न ठुड्डी उठाकर कुछ क्षणों तक रेवा के लज्जाकरुण कपोलों को निहारा, फिर हंसते हुए उसके कापते अधरों पर अपने अधर रख दिए और उसे अपने वक्ष से चिपका लिया..।

दूसरे दिन प्रात: सात बजकर पच्चीस मिनट की ट्रेन से विरेन रेवा को लेकर चर्चगेट के लिए रवाना हो गया। वीरेन को अंदेशा था कि कहीं दादा फिर लौटकर कोई तूफान न मचाए। जिस डिब्बे में विरेन और रेवा बैठे थे उसी डिब्बे में दादा भी अपनी सीट पर ऊंघ रहा था। विरेन विलेपारले उतरना चाहता था लेकिन रेवा ने उसे उतरने न दिया। फिर दोनों ग्रांट रोड उतर गए। दादा उसी तरह नींद के झोंके लेता रहा। वहाँ से चलकर विरेन और रेवा चर्नी रोड आए। कृष्ण सिनेमा के पास उतरकर रेवा श्रीकृष्ण पुरी हॉऊस के पास जाकर बोली... भगवान कृष्ण की इस तस्वीर को मैं ने आज से तीन साल पहले भी नमस्कार किया था कि वासुदेव एक नरक से उद्धार किया है दूसरे से भी करना और आज प्रभु ने मरी आकांक्षा पूर्ण की है ... आप भी नमस्कार कीजिए न।

दोपहर से पूर्व दोनों 'कोठारी मैंशन' के छोटे से कमरे में पहुँच गए। कमरे के अंदर सभी घरेलू आवश्यक वस्तुएँ मौजूद थी। रेवा चाय बनाने के लिए स्टोव्ह जलाने लगी। विरेन जैसे ही खिड़की खोलने के लिए गया तो दादा को अपनी ओर ताकते हुए पाया और खिड़की पुनः बंद कर दी। रेवा से विरेन ने दादा के नीचे खड़े होने की बात बता दी। विरेन सोच रहा था कि दादा कहीं यहाँ भी फसाद न कर बैठे। वह टेलीफोन कर पुलीस को बुलाना चाहता था लेकिन रेवा ने ऐसा न करने की सलाह दी। रेवा स्वयं खिड़की खोलने चली गई। बोली, दादा बाहर क्यों खड़े हो? ऊपर आ जइए।

विवेच्य उपन्यास से यह बात पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है कि यह मटियानी जी की पहली कृति है जिसे उन्होंने 'श्री कृष्ण भलेपुरी हॉउस' में काम से अवकाश के क्षणों में लिखा था। चूँकि प्रस्तुत रचना में शैलेश मटियानी जी ने अपना भोगा हुआ यथार्थ ज्यों-का-त्यों चित्रित कर दिया है। दूसरी बात यह कि लेखक अपने 'गर्दिश' के दिनों में जब मुंबई शहर में संघर्षरत थे उसे बड़ी तल्खी के साथ उकेरा है। हाँ, इतना अवश्य कहा जा सकता है कि सन 60 आते-आते हिंदी उपन्यास में शिल्प के धरातल पर नये प्रयोग हो रहे थे। उपन्यास लेखन में काफी बदलाव आ गए थे। 'बहती गंगा' (शिव प्रसाद मिश्र 'रूद्र' 'काशिकेय'), 'सूरज का सातवाँ घोडा' (धर्मवीर भारती) जैसे उपन्यासों में 'नई टेक्नीक' का सफलतम प्रयोग हो चुका था। यह बात दीगर है कि मटियानी जी का अध्ययन सिमित था, साथ ही साथ यूरोपीय विशेषकर अंग्रेजी उपन्यासों में जो बदलाव आ रहे थे उनसे परिचित नहीं थे, फिर भी लिखने की जबर्दस्त ललक के कारण प्रतिकूल परिस्थितियों में रहते हुए भी उनहोंने अपनी प्रथम कृति के माध्यम से यह प्रतीति तो करा ही दी थी कि उनके अंदर लिखने की अदभुत क्षमता है। मुंबई के जीवन का बड़ा ही सजीव, सशक्त तथा विशद् चित्रण समीक्ष्य उपन्यास में किया गया है। विशेषकर वेश्याओं के जीवन को लेकर। लेकिन मटियानी जी ने जिस प्रकार विरेन, रेवा और दादा को अंत में इकट्ठा दिखाया है, वह फिल्मी प्रभाव से अधिक कुछ नहीं है। मटियानी जी उपन्यास को जिस प्रकार समापन की दिशा में बढ़ाए हैं, उससे उपन्यास का सरलीकरण हुआ है। फिल्मी प्रभाव से यह उपन्यास अपने आप को बचा नहीं पाया है। शैलेश जी फिल्मों की तरह कथा को सुखांत बनाने के अपने लोभ का संवरण नहीं कर पाए हैं। फिर भी 'बोरीवली से बोरीबंदर तक' में मुंबई महानगर के चित्रण में मटियानी जी सफल रहे हैं।

■■

हिंदी विभाग, एस.बी.कला एवं के.सी.पी.विज्ञान महाविद्यालय, विजयपुर
मो. 9448185705